ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में 'जगह' की निर्मिति

कुछ प्रस्थान बिन्दु

शचीन्द्र आर्य

प्रवेश

यहां हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि 'जगह' आखिर होती क्या है? यह कैसे बनती है? इसे कौन बनाता है? हम शिक्षा के दृष्टिकोण से भी इसे टटोलने की कोशिश करेंगे कि विद्यालय में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं और उसके बाहर की दुनिया में रहने वाले किशोर और किशोरियों के लिए यह 'जगह' किस तरह उभरती है। क्या वह ऐसी कोशिश खुद भी कर रहे हैं और वह इसमें सक्रिय रूप से साझेदार हैं या अनजाने में ही वह इसका सृजन करने में लगे हुए हैं या कहीं ऐसा तो नहीं, समाज उन्हें जिन स्थानों को उपलब्ध करवा रहा है, उनसे वह संतुष्ट हैं? एक अर्थ में यहां केन्द्रीय प्रश्न है, इस 'जगह' या 'स्थान' के बनने की प्रक्रिया क्या है? क्या हम उसे चिह्नित कर सकते हैं? हम यह देखना चाहते हैं, अगर वहां कहीं कोई ऐसी अन्तर्क्रिया हो रही है, तो वह किस तरह घटित हो रही है।

यह लेख मेरे शोध कार्य का हिस्सा है, जहां आप एक शोधार्थी की हैसियत से एक ग्रामीण विद्यालय की कक्षा ग्यारह में रोज बैठते हैं। अवसर मिलने पर उन छात्र-छात्राओं से बातचीत करते और कभी उनसे किसी विषय पर कुछ लिखने को कहते हैं। अर्ध-अवकाश या अनौपचारिक बैठकों में वहां अध्यापन करने वाले अध्यापकों से कुछ वार्तालाप होता रहता है। इस आलेख में हम यह देखने की कोशिश करेंगे, गांव के उस विद्यालय में इतना अरसा बिताने के बाद 'जगह' का सवाल मेरे भीतर किस तरह आकार लेता रहा और जो घटित होता दिखा, उसने मेरी समझ को किस तरह निर्मित किया।

यह बात मेरे मन में तब घर कर गई, जब कक्षा ग्यारह की छात्रा अपनी सहेलियों से बात करते हुए इस बात को स्वीकार करती है कि वह जितनी जोर से यहां, इस कक्षा में हंस सकती है, अगर वह अपने घर पर इतनी जोर से हंसेगी तो उसकी अम्मा और पिताजी उसे डांट देंगे। यहां जो 'हंसना' है और जो 'डर' है, दोनों साथ-साथ चल रहे हैं। उसने हंसने के लिए 'जगह' चुन ली है। इसी में उसके लिए न हंसने वाली जगह की निर्मिति भी समाहित है। उसका अपना घर, जहां वह न हंसना स्वीकार कर लेती है। थोड़ी देर विचार करके देखिये, उसने यह निर्णय कब लिया होगा कि घर वह जगह नहीं है, जहां वह हंस सकती है और उसके लिए घर की चारदीवारी के बीच बनने वाली जगह कैसी है, जहां वह हंसने से पहले कितनी बार सोचती होगी?

यहीं से हम अपने प्रश्न पर दोबारा लौटते हैं, यह 'जगह' आखिर है क्या? इसे समझने और जानने के लिए यहां उन घटनाओं, प्रसंगों और प्रकरणों की सहायता ली जाएगी जो या तो कक्षा में अवलोकन या बातचीत के दौरान मेरे समक्ष आए या विद्यालय के बाहर जिनका मैं स्वयं प्रत्यक्षदर्शी रहा। एक अर्थ में इसे आप मेरी सीमा भी मान सकते हैं।

प्रकरण 1 : विद्यालय के भीतर

एक रोज की बात है, जब कक्षा में हो रही चर्चा में उनसे जानना चाह रहा था कि गांव में लड़का और लड़की यदि मिलना चाहें तो वह कहां मिल सकते हैं? यह प्रश्न अपनी प्रकृति में बहुत निजी है। इसे सामने बैठे छात्रों से कैसे पूछूं यही उधेड़बुन मेरे मन में बहुत देर से चल रही थी। मुझे कक्षा में बैठते हुए लगभग दो महीने से ज्यादा वक्त हो चुका था। यह दिन भाई दूज के तुरंत बाद का था और सारी लड़कियां मनचिंता का व्रत करने के लिए घर पर रुक गई थीं।

उन्हें मालुम था, मैं लिखता हूं और उनकी कक्षा में 'हंस' पत्रिका के अक्टूबर अंक की प्रति उन्हें दिखा चुका था, जिसमें मेरी डायरी के कुछ हिस्से छपे थे। इसी प्रसंग को आधार बनाकर, बातचीत को किसी तरह आगे बढ़ाने की गरज से मैंने बहाना बनाया और कहा, 'मैं एक कहानी पर काम कर रहा हूं, जिसमें किसी गांव के लड़का और लड़की मिलना चाहते हैं, पर कहां मिलें, यह मुझे समझ नहीं आ रहा है? अब तुम सब तो गांव में रहते हो, अगर तुम मुझे बताओगे, तो मेरी कहानी कुछ आगे बढ़ सकेगी। व्रत की वजह से कोई छात्रा कक्षा में उपस्थित नहीं थी। उनकी अनुपस्थिति में भी छात्रों में एक संकोच था। वह कुछ भी कहने में झिझक रहे थे। कोई कुछ कहने को तैयार ही नहीं था।

क्या वह मेरे इस झूठ को पकड़ नहीं सके होंगे, कह नहीं सकता। वह मुझ पर विश्वास कर यह बता सकते हैं, यह सोचते-भालते एक लड़का, जिसकी शादी हो चुकी थी, बताने लगा, वह कातिक पुनमासी (कार्तिक पूर्णिमा) के नहान मेले में लखरांव (भिंगा से पहले एक जगह) जा रहा है। वहां उसकी पत्नी अपनी भाभी के साथ आने वाली है। गऊना (गौना) नहीं हुआ है इसलिए वह मिलने का यह तरीका निकालते हैं। थोड़ी देर साथ रहेंगे। साथ झूला झूलेंगे। टिक्की और पानी बतासा खाएंगे। मन हुआ तो वहां आए हुए फोटो स्टूडिओ में अगल-बगल खड़े होकर हाथ में हाथ पकड़ कर तस्वीर खिंचवाएंगे और उसकी बनी एक कॉपी लड़का अपने साथ ले आएगा।

ग्रामीण जीवन में मेले या ऐसे ही धार्मिक अवसर अधिकांश तौर पर इसी तरह व्याप्त हैं। कोई अपनी लड़की दिखाना चाहता है लेकिन शुरुआती दौर में रिश्तेदारी या गांव में बताना नहीं चाहता, तब ऐसे किसी अवसर या मंदिरों या शक्तिपीठों पर लगने वाले साप्ताहिक हाट बाजारों की भीड़ के बीच एक कोना चुन कर दोनों पक्ष आपस में विवाह संबंधी जो बातें करना चाहते हैं, वह कर लिया करते हैं। यह बहुत सामान्य-सी बात है। उतना ही सामान्य यह भी है कि विद्यालय से लड़के आधी छुट्टी लेकर अपने मित्रों के साथ गुधरिया बाबा (मंदिर) चले जाते हैं, जहां पहले से तय समय पर लड़की वाले मौजूद हैं और वह उसे बिना बताए देख सकते हैं। यह एक तरह की गोपनीयता का सृजन भी करता है, जहां लड़का और लड़की आपस में कभी जान ही नहीं पाते कि उनके लिए लड़की या लड़का को देखा जा रहा है।

इस चर्चा में बहुत से धार्मिक स्थलों का जिक्र आया परंतु जो विवाहित नहीं हैं, वे कैसे और कहां मिलते हैं, इस पर छात्र बिलकुल मौन धारण किए हुए थे। कोई इस पर कुछ नहीं बोला। इस न बोलने को मुझे किस तरह लेना चाहिए था?

लेकिन यह चर्चा उसी दिन समाप्त हो गई हो, ऐसा नहीं है। यह किसी न किसी रूप में बहुत दिनों तक हमारी बातचीत में बनी रही और एक दोपहर अर्ध-अवकाश में एक छात्र मुझे फोन पर बात करता देख, पास आया। उस छात्र ने तब जो बात कही वह हुबहू यहां लिखे दे रहा हूं। वह बोला, आप सर जी! उस दिन जो बात कह रहे थे, उसमें हम कुछ बोलना चाहते हैं। मैंने कहा, बोलो। उसने बताया, एक दिन दोपहर में अपने एक मुसलमान दोस्त को मोटर साइकिल पर बैठाकर अपनी जाति की विवाहिता लड़की से मिलवाने अस्पताल के पीछे ले गया था। इतना कहकर वह चुप हो गया। उसने आगे कुछ नहीं कहा। मैं अभी भी उसके ऐसे व्यवहार को किसी सैद्धांतिकी से समझने की कोशिश कर रहा हूं।

कभी-कभी सोचता हूं, उसने ऐसा क्यों किया? वह छात्र किन मूल्यों से संचालित हो रहा होगा? क्या मित्रता ही उसके लिए सबसे बड़ा मूल्य है? क्या उसे बिलकुल अहसास नहीं है, इस तरह के काम में कितना खतरा है? क्या उसे नहीं पता, उसी राज्य के नव निर्वाचित मुख्यमंत्री ने 'रोमियो दस्ते' गठित किए हैं। उनकी राजनीतिक समझ में एक मुसलमान लड़के का एक हिन्दू लड़की से मिलना मुसलमानों के जिहाद का हिस्सा है। एक विवाहिता स्त्री से अपने मित्र को मिलवाने के लिए ले जाते वक्त वह इस संस्था के बंधनों को नहीं जानता होगा। वह हिम्मती है, इसमें कोई दो राय नहीं है। लेकिन जब गांव के लोगों को पता चलेगा, तब क्या होगा। जिसे वह सिर्फ मिलवाना सोच रहा है, उसके पूर्व निर्धारित अर्थ कितने आत्महंता हैं, इसका आभास उसे नहीं है। फिर भी मुझे लगता है, इन सब खतरों और स्थापित मूल्यों के बावजूद इस प्रकरण में जगह का 'सृजन' हो रहा था। भले यह जगह भौतिक रूप से किसी आड़ के पीछे कुछ देर के लिए बनी थी।

घटना 1 : बैंगन के खेत वाला लड़का

आप शहर में किसी मंदिर, गुरद्वारे, बगीचे, किसी मेट्रो स्टेशन, किसी बाजार की कल्पना कर सकते हैं। गांव में लड़का लड़की के लिए यह जगह कहां और कौनसी होगी, यह कोई नहीं जानता। गांव के चारों तरफ खाली जमीन है, जो खेत हैं। एक बहाने से लड़के किसी खाली मैदान में क्रिकेट खेलने के लिए जा सकते हैं लेकिन लड़कियां कैसे जाएंगी? अगर वह जा भी रही हैं, तब उनका क्या प्रयोजन है, यही सबसे बड़ा सवाल बनकर उनके सामने आएगा? आप क्या सोचते हैं, कोई लड़की गांव के बाहर खेतों की तरफ चली जा रही है और कोई उसे देख भी नहीं रहा होगा? इतने दिन वहां रह कर इसकी संभावना बहुत कम और अपवाद स्वरूप लगी। ऐसा अवसर कभी आएगा ही नहीं कि कोई उन्हें देख न रहा हो।

आप नीचे वर्णित प्रसंग में देखेंगे, जब लड़का और लड़की वक्त और जगह दोनों तय कर लेते हैं, तब भी मिल नहीं पाते। एक लड़का है जो किसी तरह पास के गांव की एक लड़की को उसकी भाभी के फोन नंबर पर फोन करता है और तड़के लड़की को बैंगन के खेत में उससे मिलने के लिए बुलाता है। वह कैसे आएगी, यह दोनों को नहीं पता।

लड़का चार बजे सुबह लड़की के घर के पास, बैंगन के खेत में छिप कर बैठा है और लड़की के दिये नंबर पर लगातार फोन कर रहा है। घर में किसी का फोन इतनी सुबह बजना बहुत असामान्य सी बात है। इतनी बार कोशिश करने पर एक मर्तबा किसी ने फोन उठा लिया। लड़का हड़बड़ी में दूसरी तरफ से आवाज सुने बगैर कहता है, हम भाटा के खेत में बइठे हन... (मैं बैंगन के खेत में बैठा हूं...)। इतना कहकर वह तुरंत फोन काट देता है। घंटी बजने पर फोन लड़की ने नहीं उसके पिता ने उठाया था। वह मामले की गंभीरता को देखते हुए घर के अन्य सदस्यों को नींद से जगाते हैं।

लड़का बाहर ठंड में, खुले आसमान के नीचे, खेत में लड़की का इंतजार कर रहा है। दरवाजे पर हलचल देख कर वह टॉर्च की रौशनी चालू करता और तुरंत बंद कर देता है। जिस तरफ से रौशनी आ रही थी, तीन-चार लोग लठियां लिए बहुत तेजी के साथ घर से निकल कर उस खेत में आते हैं और लड़के को धर दबोचते हैं। लड़के की खूब पिटाई होती है। पुलिस थाने तक खबर हो जाती है। लड़का लाख पूछने पर भी नहीं बताता, वह वहां क्यों आया था। चोर मान कर उसे पुलिस के हवाले कर दिया जाता हैं। लड़के के पिता पुलिस को पैसा देकर हवालात से उसे छुड़वाते हैं।

इस घटना के बाद बदनामी दोनों, लड़का और लड़की, की समान रूप से हो रही है। वह लड़की जहां पढ़ती है, सब जान गए, लड़का उसी से मिलने आया था। इस प्रकरण के बाद एक दिन अचानक रास्ते में शोधार्थी की उस लड़के से मुलाकात हुई, वह पहले से मुझे जानता है। वह बोला, भईया, अब यहां नहीं रहेंगे। नाम बहुत खराब हो गया। अब यहां से चले जाएंगे। हमारी बुआ बाहर रहती हैं। वहां चले जाएंगे या फिर बहराइच में किसी कारखाने पर काम कर लेंगे पर यहां नहीं रहेंगे। तब तुम्हारी पढ़ाई का क्या होगा? हां भईया! इंटर किसी तरह कर लेंगे, फिर देखा जाएगा। पढ़ाई में अब मन नहीं लगता हमारा। यहां ध्यान देने वाली बात यह भी है, मेरी तरफ से ऐसा कोई इशारा नहीं किया

गया था कि मैं उसकी पिटाई और थाने से छुड़वाने वाली घटना को जानता हूं। फिर भी वह मुझसे पहली बार मिला और उसने बात वहीं से शुरू की। पूरी बातचीत में वह केवल अपनी भविष्य की योजना इस तरह से बता रहा था, जैसे मुझसे पहले भी वह कई व्यक्तियों को यही जानकारी दे चुका है और इसमें वह अभ्यस्त हो चुका है।

आप क्या सोच रहे हैं? जब लड़का और लड़की में आपसी सहमति है, वह दोनों मिलना चाहते हैं। दोनों तय करते हैं, तब क्यों उन्हें मिलने नहीं दिया जा रहा? आप इस तरह भी विचार कर सकते हैं, कि दोनों अपने माता-पिता से इस विषय पर चर्चा करते और तब दोनों को मिलने दिया जा सकता था? ऐसे परिवार आपके आस पास कितने हैं, यह आप भी जानते हैं। मुझे आगे कुछ भी बताने की आवश्यकता नहीं है। इस घटना के बाद जो लोग तरह-तरह की बातें बना रहे हैं, उनके उद्देश्यों की एक सूची बना लेने के बाद शायद यह प्रकट रूप से हमारे सामने आ सकता है कि वह किन मूल्यों और कैसे समाज को संरक्षित करना चाहते हैं। यह अगली घटना में और स्पष्ट रूप से हमारे सामने आएगा।

घटना 2 : सोलह फरवरी, दोपहर का वक्त

जहां स्थापित और मान्य मूल्यों पर जीवन का सारा कार्य व्यापार टिका है, उसमें कोई व्यक्ति ऐसे दिन की कल्पना नहीं कर पाएगा कि उनसे अलग समाजों में फरवरी की चौदह तारीख एक ऐसा दिन होता है, जिसमें लड़का-लड़की आपस में प्यार का इजहार करते हैं, जिसे 'वेलेंटाइन डे' या 'प्रेम दिवस' कहा जाता है। जहां विवाह अपनी-अपनी जातियों और धर्म के दायरे में होते आए हैं, वहां ऐसे दिनों की किसी को कोई जरूरत नहीं है। इसमें गांव भी कोई अपवाद नहीं है।

खुद जिस कक्षा में रोज बैठा करता था, वहां के छात्रों को 'वेलेंटाइन सप्ताह' के दिन रटे हुए थे। आज 'प्रपोस डे' है, कल 'किस डे' है। कक्षा के भीतर वह एक ऐसे दायरे में है, जहां किसी बाहरी व्यक्ति को इसकी भनक तक नहीं है। जब यह दिन आपके 'भीतर' से निकलकर 'बाहर' प्रकट होता है, तब आपको विकट स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है। ऐसा इसलिए भी कह पा रहा हूं क्योंकि एक ऐसी घटना बिलकुल मेरी आंखों के सामने घटित हुई। चौदह फरवरी को बीते दो दिन हो चुके थे। आज सोलह फरवरी थी। दोपहर का वक्त था। मंदिर के आस-पास एकदम सन्नाटा था। पहले मुझे एक लड़का दिखा और कुछ ही देर बाद एक लड़की उसके पास से रोते हुए अपने घर की तरफ जाती हुई नजर आई।

वह क्यों रोती हुई वहां से गई, यह भेद कुछ देर बाद खुला, जब उस लड़की के चाचा उस लड़के पर अपनी भतीजी को छेड़ने के आरोप में पीटते हुए लड़के को कुएं के पास ले आए। लड़के की कमीज एक तरफ से फट चुकी थी। नीचे की बानियान साफ दिख रही थी। लड़की सिर झुकाए वहीं पास खड़ी रोए जा रही थी। लड़का इतना पिट चुका था कि उसके होंठ फट चुके थे, खून बह रहा था। उसे पीटने वाले लड़की के चाचा ने भीड़ इकट्ठा होने पर उस लड़के की पिटाई को जायज ठहराया। वह चिल्ला चिल्लाकर कहने लगे, 'इस लड़के ने हमारी बिटिया को 'आई लव यू' कहा और कहा तुम भी हमें बोल दो तो हम तुम्हें यह घड़ी दे देंगे; हमारी लड़की किसी लड़के से घड़ी क्यों लेगी? कह रहा है, तुम्हारे लिए ही लाया हूं। बेलेंटाइन डे का गिफ्ट'। उन दोनों (पीटने और पिटने वाले) की आवाज सुनकर भीड़ इकट्ठा हो चुकी थी।

चीखने चिल्लाने की आवाजें लड़के के घर तक भी पहुंची और उस तरफ से उसके पिता और बड़े भाई आ गए। पहले तो उन्होंने तैश में आकर दो-तीन तमाचे अपने बेटे और छोटे भाई के गाल पर मार दिये। लेकिन थोड़ी ही देर बाद उन्हें अपने बामन और उनके यादव होने की बात याद आई और याद आई कोई पुरानी दुश्मनी। अब वह मानने को ही तैयार नहीं थे कि उनके लड़के ने लड़की के साथ ऐसी-वैसी कोई हरकत की है। वह अड़ गए और उल्टे उनके लड़के को पीटने वाले लड़की के चाचा को कहने लगे, अगर ऐसी कोई बात थी तो तुम्हें पहले हमें बताना चाहिए था, हमारे लड़के को पीट-पीट कर अधमरा करने की क्या जरूरत थी? अब झगड़ा दूसरी तरफ रुख लेने लगा था। लड़का भी

अपना पायजामा नीचे कर अपना जननांग दिखाने लगा, जहां शायद इतना पीटे जाने से सूजन आ गई थी। अब सबका ध्यान लड़के की पिटाई की तरफ चला गया। लड़की को छेड़ने की बात कहीं पीछे जाने लगी। सब कहने लगे, इतनी बेरहमी से उसे नहीं पीटा जाना चाहिए था। मारा तो मारा, लेकिन वहां क्यों मारा? अभी तो लड़के की शादी भी नहीं हुई है।

थोड़ी देर के बाद दोनों तरफ से कुछ नए तर्क न आते देख भीड़ का उत्साह जाता रहा। वह तितर-बितर हो गई और दोनों पक्ष दूर से ही एक-दूसरे पर चिल्लाकर अपना गुस्सा निकालने में अपनी ऊर्जा व्यय करने लगे।

आपके सामने सारी घटना का आंखों देखा हाल है। आपको क्या लगता है, लड़के की पिटाई क्यों हुई? क्या लड़के और लड़की के बीच अपरिचय की वजह से यह नौबत आई? अगर वह दोनों एक-दूसरे को जानते भी थे, तब भी क्या गांव वह 'जगह' हो सकती है, जहां कोई नया मूल्य यकायक अपनी वैधता पा सकता है? क्यों लड़की उस प्रस्ताव को सुनकर रोने लगी होगी? अगर हम थोड़ा और धैर्य रखें, तब हमारे अनुत्तरित प्रश्नों की सूची और भी लंबी हो सकती है। लेकिन यहां कौनसी ऐसी मूलभूत बात है, जिसकी वजह से यह घटना इस तरह आकार लेने लगी? शायद आप इसका उत्तर जानते हैं। थोड़ा अपने भीतर रुकेंगे तो उसे चिह्नित भी कर पाएंगे।

चलिये थोड़ी मदद किए देते हैं। बस आप बता दीजिये, आप 'जगह' को किस रूप में देखते हैं? जगह मतलब कोई भी जगह या स्थान। हम जानते हैं, किसी भी जगह या खाली स्थान की निर्मिति इस समाज में या किसी भी समाज में उससे निरपेक्ष होकर नहीं रह सकती। आप किसी भी ऐसी जगह की कल्पना करके देखिये, क्या कोई ऐसी जगह है, जहां केवल आप हैं? क्या आपने उसे अपने लिए निर्मित किया है? आप क्या एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं, जो उसका उपयोग कर रहे हैं? इन प्रश्नों के उत्तर जरूरी नहीं सबके लिए एक रेखीय हों। वह बहुस्तरीय और अनेकों परतों वाले हो सकते हैं।

आपका लिंग, समय, एकांत, भीड़ सब अलग-अलग स्थितियों और भय को भिन्न-भिन्न स्तरों पर निर्मित करेगा और आप उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। यह एक स्तर पर आपकी पहचान का सवाल भी है और उन जगहों के उपयोगकर्ताओं के रूप में आप किन स्वतंत्रताओं को अर्जित कर सकते हैं, यह भी पहले से तय है। आप यह भी जानते हैं, जो इन कायदों के बाहर जाएगा, उसके साथ क्या हो सकता है। यह घटना तो बहुत-सी घटनाओं में केवल एक घटना है।

घटना 3 : चिट वाले लड़के

इतनी सारी बातों के बाद भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं हूं, ऐसा नहीं है। अभी दोबारा ऊपर से गुजरते हुए लग रहा था, मेरे पास घटनाएं बहुत हैं। जो सैद्धांतिकी उसे खोल सकती है, उसकी भी थोड़ी बहुत समझ है, लेकिन कभी-कभी, अलग-अलग घटनाएं एक साथ रखने से भी तस्वीर साफ होकर दिखने लगती है। मैं यहां यही कर रहा हूं। जो ग्रामीण अंचल में हो रहा है, उसे अपने साथ यहां लेता आया हूं। मेरे पास वह कौन से अनुभव हैं, यही तो मुझे बताना है। मैंने दिल्ली में बतौर अतिथि शिक्षक लगभग दो साल हिन्दी अध्यापक के रूप में अध्यापन किया है। जिस घटना का जिक्र आगे करने जा रहा हूं, उसके सूत्र उस अध्यापकीय जीवन से जा मिलेंगे, कभी सोचा भी नहीं था।

उस शाम बहराइच से घर लौटने में थोड़ी देर हो गई। संदीप पालेसर पर थोड़ा व्यस्त था, नहीं तो उसे ही आसाम चौराहे तक बुला लेता। टैम्पो उधर सामने खड़ा था। उसमें जाकर बैठ गया। आज बैठते हुए मुझे बहुत अजीब लगा। अजीब यह कि तीन मोटर साइकिल उस अकेले टैम्पो को घेरे खड़ी थी। टैम्पो का चालक समझ तो रहा था, मामला क्या है पर सवारी में पुरुषों के नाम पर दो लोग और थे और हमारी संख्या उन मोटर साइकिल वालों से कम थी, इसलिए वह कुछ बोलने की स्थिति में नहीं था। जब हम थोड़े बढ़े और टैम्पो भर गया, तब थोड़ी हिम्मत दिखाकर उसने मोटरसाइकिल वाले लड़कों से कहा, काहे दिमाग लगाए हो? उसके ऐसा कहने पर दो मोटर साइकिल वाले पीछे मुड़

गए और एक को वह समझाने लगा। यह ठीक बात नहीं है। क्या ठीक बात नहीं है? वह दो लड़के बोले। पर्ची पर लिखकर नंबर टैम्पो में कौन फेंका?

दिल्ली में अध्यापन के दिनों में जब साल में एक बार विद्यालय के सभी विद्यार्थी स्थानीय भ्रमण के लिए जाते थे, तब यहां भी लड़के अपना मोबाइल नंबर कई-कई पर्चियों पर लिख कर साथ ले जाया करते थे। जहां कहीं लड़कियों के विद्यालय की बसें दिखती, वह खिड़की के अंदर ढेर के ढेर पर्चियां फेंक दिया करते। कुछ किसी ऐतिहासिक स्मारक के प्रवेश द्वार पर लड़कियों के सामने पर्चियां फेंका करते। उन्हें आशा थी कि किसी न किसी दिन कोई लड़की उनके नंबर पर फोन जरूर करेगी। फोन करेगी। फोन पर बात होगी। कभी हुआ तो कभी-कभार कहीं मिल-विल आया करेंगे।

यह एक सभ्यता के भीतर संवादहीनता का प्रश्न है या नहीं, मुझे नहीं पता पर बिलकुल उसी तर्ज पर चन्दरखा गांव की बैठी उन दो लड़कियों के लिए उन लड़कों ने कागज की पर्ची पर नंबर लिखा और वह टैम्पो में फेंककर चले गए। उन्हें क्या आशा रही होगी? कभी उन पर्चियों को उठाने वाली लड़कियां उनसे बात करेंगी? टैम्पो में बैठे एक पुरुष को यह हरकत पता चली, तब उसने कहा, बाजार के लड़के हैं। इन्होंने कभी गांव की मार नहीं खाई है। आने दो चौराहे पर, कमर सीधी कर देंगे। समझते क्या हैं यह हमारी लड़कियों को। यह उस पुरुष के शब्द थे जबकि वह आज से पहले उन दोनों किशोर लड़कियों से मिला तक नहीं था लेकिन ऐसी स्थिति में 'मदद' करना, उसने अपना फर्ज समझा।

कोई अपरिचित पुरुष पहली बार मिलने पर भी खुद को उन अकेली जा रही लड़कियों की मदद के लिए क्यों तैयार हो गया, इसको समझाने के लिए बहुत काम हुआ है। लड़कियों को किसी का संरक्षण चाहिए, यह उनके अकेलेपन में अंतर्निहित है। लेकिन आप बस इस बात पर ध्यान दीजिये, यहां कोई उन लड़कियों से क्यों नहीं पूछ रहा कि इसमें उन लड़कियों की क्या राय है? क्या उन लड़कियों ने उन लड़कों की फेंकी चिटों को उठाया था? अगर वह उन पर्चियों को उठा लेतीं, तब क्या कभी उन लड़कों से बात करने का उनका मन नहीं होता? यह जो दूसरा पक्ष अनुपस्थित है, यही इस पूरे प्रकरण में एक अधूरी समझ को पुष्ट करता है। मैं चाह कर भी उनसे यह सवाल वहां नहीं कर सकता था।

प्रकरण 2 : बाहर की खाली जगह

गांव जैसी संरचना में 'दिख जाना' भी बहुत असामान्य घटना है। आप सोच भी नहीं सकते, यह किस तरह मेरे सामने प्रकट हुआ होगा। तुलसीपुर चौराहे पर गणेश पूजा का यह तीसरा साल था और उस रात जगराता था। सब रात भर जागने वाले थे। पूजा समिति की तरफ से आज झांकी निकलने वाली है। आस-पास के गांव के लोग छोटे-छोटे समूहों में आ रहे थे। लड़कों के अपने गुट थे और सयानी लड़कियां अपनी माताओं और घर वालों के साथ आ रही थीं। लड़के पास आकर नमस्ते कर रहे थे और बराबर पूछ रहे थे, मैं यहां कहां रहता हूं? थोड़ी बहुत बातचीत के बाद अगले दिन समय पर विद्यालय पहुंचने की गरज से जल्दी सोने के लिए बीच में ही लौट आया। अगला दिन हुआ और कक्षा में पहुंचने पर एक छात्रा बोली, सर जी! हमने आपको कल पूजा में देखा था। आप भी वहां खड़े थे। मेरे लिए यह बहुत ही आश्चर्य कर देने वाली घटना थी, ऐसा क्यों हुआ? वह अपनी माता के साथ होने पर भी एक दूरी पर बनी रही।

इस प्रकरण के एक सिरे पर मैं हूं, जो एक अध्यापक की हैसियत से किसी दिल्ली जैसे शहर से उनकी कक्षा में रोज हर घंटी में बैठा रहता है, उनसे बात करता है, वह सब मौका लगते ही मुझसे सवाल-जवाब करते हैं। उसी विद्यालय का 'मैं' जब किसी सार्वजनिक जगह पर दिख भी जाता हूं, तब विद्यालय का परिचय 'अपरिचय' में तब्दील हो जाता है। 'लड़के' जो वहां विद्यालय के 'छात्र' की हैसियत से मिले, भले वह उस कक्षा के विद्यार्थी नहीं थे, लेकिन वह मिले। ऐसा क्यों हुआ कोई छात्रा, जो तब अपने परिवार वालों के साथ थी, आपको देखकर भी कोई संवाद नहीं करती है। परंतु आपको अगले दिन सूचित करती है कि उस पूजा में आप भी उसे दिखाई दिये थे।

हो सकता है, इसके कई अर्थ और ध्वनियां भी हों, पर अभी मैं यहीं तक पहुंच पा रहा हूं। ऐसा नहीं है वह अकेली छात्रा थी, जो अपनी माता के साथ थी इसलिए कोई बात करने में संकोच कर रही होगी। बहुत सी छात्राएं बाहर अकेले दिखने पर भी किसी 'अपरिचित' की तरह ही बनी रहती थीं। जब मैं इस परिचय और अपरिचय वाली शब्दावली में अपनी बात कह रहा हूं, मुझे इमानुअल कांट बार-बार याद आ रहे हैं, जहां वह कहते हैं कि 'ऐसा नहीं है, कि आप हर जगह एक जैसी बात कर सकें। आपको चर्चा करने के लिए अपने जैसे लोगों की आवश्यकता पड़ती है और आप मिलकर ऐसे स्थान की रचना करते हैं, जहां आप बिना किसी भय या दबाव के अपनी बात को रख सकें और उस पर गंभीर विचार कर सकें'।

मुझे लगता है, उस छात्रा और ऐसी कई छात्राओं के लिए 'विद्यालय' वह 'स्थान' होगा, जहां वह बिना किसी पारिवारिक दबाव के अपने हिस्से की बात कह सकती है। उन्हें वहां कोई भय या डर नहीं है। वह वहां किसी की सतत निगरानी में नहीं है। वह वहां 'लड़की' होते हुए भी 'विद्यार्थी' या 'छात्रा' की भूमिका में है। वह छात्रा है और वहां छात्रों को छोड़कर हर पुरुष 'अध्यापक' की भूमिका में है, जिनसे वह बेरोकटोक किसी विषय पर बातचीत करने के लिए स्वतंत्र है। सबसे जरूरी यह स्वतंत्रता है। किसी से भी मिलने, बात करने में सबसे प्राथमिक कारक।

जगह : विद्यालय

आप सोच रहे होंगे, इन संदर्भों का कोई सूत्र क्यों नहीं मिल रहा। लेकिन ऐसा नहीं है। एम.एन.श्रीनिवास आधुनिकीकरण के संदर्भ में एक जगह विद्यालय और जातिगत बंधनों को एक साथ अपनी चर्चा में लाते हुए कहते हैं कि 'विद्यालय ही वह स्थल बनकर उभरेंगे, जहां अलग-अलग जातियों के लड़के, लड़कियां आपस में मिलेंगे और हमारे समाजों में जाति का बंधन धीरे-धीरे शिथिल पड़ने लगेगा'। इस शिथिलता की गति क्या होगी, इसका कोई अनुमान मेरे पास नहीं है।

मैं जिस विद्यालय में था, वहां लड़के और लड़कियां अलग-अलग समूहों में बैठते हैं। लड़कियां दरवाजे की तरफ और लड़के उस दीवार की तरफ। आधी छुट्टी में भी जो एकांत हो सकता था, वह सबकी निगरानी में बन ही नहीं पाता। इसके बावजूद मैंने देखा है, इसी कक्षा ग्यारह के एक लड़के को। वह अर्ध-अवकाश में एक लड़की के लिए मोटर साइकिल से आता है। दोनों में बात कितनी होती होगी, कह नहीं सकता। वह बस उसका रास्ता रोक कर खड़ा हो जाता है। एक दूसरा छात्र किसी अन्य विद्यालय की छात्रा से सुबह विद्यालय आते वक्त और दोपहर में घर वापस जाते वक्त मिलने के लिए कई दिनों तक पढ़ने नहीं आया। यह बात उसके एक मित्र ने मुझे बताई। बाद में उसने स्वयं इसकी पुष्टि की।

इन दोनों ही प्रकरणों में लड़का लड़की से बात करने के अवसर बनाने की इच्छा रखते हैं। दोनों ही छात्र पढ़ने के लिए विद्यालय नहीं आ रहे हैं। इसे एक स्तर पर 'छेड़छाड़' भी कहा जा सकता है। लेकिन हमें थोड़ा ध्यान से देखना चाहिए, यह दोनों लड़के जाने अनजाने एक 'जगह' या 'स्पेस' को बनाना चाहते होंगे, जहां वह बात भी कर सकें और मिल भी सकें। लेकिन यह कैसे होगा, इसकी समझ दोनों में ही कहीं नहीं दिखाई देती। जितना वह कर सकते हैं अपनी समझ से कर रहे हैं, भले आप उसे 'छेड़छाड़' मानते रहें। उससे बस होगा यह कि जो हो रहा है, वह हम समझ नहीं पाएंगे।

इस सिलसिले में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले थोड़ी देर के लिए आप मेरी मदद कीजिये। मेरी तरफ से कुछ पल के लिए इस बात पर विचार कीजिये कि यदि आपको बिना पैसा खर्च किए किसी स्त्री या पुरुष पर निगरानी रखनी है, तब आप यह कहां रख पाएंगे? गांव में या शहर में? इन दोनों की संरचना में एक ऐसा भेद है, जो इस निगरानी को एक सार्वजनिक जिम्मेदारी के कार्य में तब्दील कर देता है। गांव का सरल समाज इसके लिए एकदम मुफीद जगह जान पड़ता है। यह व्यवस्था अनौपचारिक रूप से वहां व्याप्त है। हर कोई इसके दायरे में है। मुख्य रूप से स्त्री ही क्यों, इस पर आप सवाल उठा सकते हैं। उनके पास इसका जवाब भी है। जहां जाति पितृ सत्तात्मक ढांचों को बनाए

रखने का माध्यम हो, वहां किसी स्त्री का किसी पुरुष से मिलना अपने आप में बहुत बड़ी व्याधि या संकट है। मैं आपसे पूछता हूं, ऐसी स्थिति में क्या विद्यालय वह 'जगह' हो सकते हैं? क्या आप इन विद्यालयों को इस रूप में देखना स्वीकार करेंगे?

अंत से पहले

जैसा कि मैंने ऊपर कहा, इन घटनाओं की और परतें हो सकती हैं। उन्हें विश्लेषित करने के लिए कई पैने औजारों का इस्तेमाल किया जा सकता है। आप यह भी कह सकते हैं, फौरी तौर पर इन्हीं से शुरुआत क्यों की गई? क्यों लड़का और लड़की के मिलने को प्रस्थान बिन्दु बनाया गया? मेरे पास इन प्रश्नों के कई उत्तर हैं। बस मेरा एक सवाल यह है कि शहर में जिस स्वच्छंदता के साथ लड़के और लड़कियां मिलते हैं, साथ बैठते हैं, साथ सफर करते हैं, उसे अर्जित करने के लिए उनका संघर्ष क्या है? घर से निकलने के बाद उनका यह संघर्ष अपनी न्यूनतम अवस्था में है। वह जिसे यहां इस परिवेश में स्वाभाविक मान रहे हैं, गांव में इसके लिए कितनी चुनौतियों का सामना रोज करना पड़ता है।

यह कोई तुलनात्मक अध्ययन नहीं है। न ही गांव के शहर बन जाने की किसी लालसा को प्रकट करना है। बस यह विचार करना चाहता हूं, इसमें शिक्षा की क्या भूमिका हो सकती है? शहरों में तो हम ऐसा होता कुछ देख नहीं रहे हैं। जो जितना शिक्षित है, वह उतने बड़े अंग्रेजी अखबार में सजातीय वर या वधू खोज रहा है। आर्थिक समृद्धि भी हर तरह से एक बेहतर समाज के निर्माण कर पाने में अक्षम साबित हुई है। विषमताएं इस कदर बढ़ रहीं हैं कि उससे नई तरह की असमानताएं उत्पन्न हो रही हैं। सोचता हूं, क्या भविष्य में लड़के और लड़कियों के बीच की कम होती दूरी गांव को किसी तरह पुनर्रचित कर सकती है? क्या शिक्षा गांव की संरचना में किसी तरह का परिवर्तन लाने में सक्षम है या वह भी उन्हीं मूल्यों और संस्थाओं के साथ समझौतों के बल पर खुद को बचाए रखने की जद्दोजहद कर रही है? अगर वह ऐसी है, तब वह किस तरह के मनुष्यों को भविष्य के लिए बनाएगी और किस तरह के समाज का निर्माण करेगी?

प्रश्न बहुत सारे हैं। कठोर, निर्मम और अनुत्तरित। ◆

लेखक परिचय : फिलहाल दिल्ली विश्वविद्यालय के केन्द्रीय शिक्षा संस्थान (CIE) से 'ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता और शिक्षा की अंतर्क्रिया' विषय पर शोध कार्य कर रहे हैं।

संपर्क : shachinderarya@gmail.com